श्रुवावती की कथा

ईश्वर ने मानव शरीर एवं मन में कुछ ऐसे गुण और प्रकृति रूपी स्वभाव का समन्वय-साधन किया है जिससे मानवकुल उन सभी सद्‌गुणावली का अभ्यास करे तो, वह मानव से देव में उन्नत हो सकता है। ईश्वर सृष्ट उन सभी गुणों में धैर्य और स्थैर्य प्रधान हैं। मन की एकाग्रता और धैर्य द्वारा प्रार्थित फल-लाभ के लिये कठोर साधना की है ऐसे अनेक ईश्वरकोटि के मानव व मानवी इस भारतभूमि पर थे, उनके मध्य भारद्वाज ऋषि कन्या 'श्रुवावती' अनन्यतम है।

नर्मदा परिक्रमा के पथ पर 'बदरपाचन' नामक एक तीर्थस्थान है, यहाँ भारद्वाज ऋषि की कन्या श्रुवावती ने तप किया था। उन्होंने देवराज इन्द्र को पति रुप में कामना किया था एवं उस मनोकामना को पूर्ण करने के निमित्त वे नर्मदा के तट पर मुण्डमहारण्य के मध्य अति नियम-निष्ठा-सह व्रत अवलम्बन कर तपस्या में रत रही।

प्रचीनकाल में, भारतवर्ष के मनुष्य सर्ववस्तुओं की प्राप्ति के लिए मूल उपाय 'तपस्या' ही मानते थे। इस संस्कारवश भारद्वाज ऋषि कन्या श्रुवावती ने भी तपस्या के पथ का अवलम्बन किया। शताधिक वर्ष की तपस्या से अति श्रान्त होने पर अन्त में देवराज इन्द्र के मन में श्रुवावती की तपस्या से सन्तुष्टि होने पर उनका हृदय विचलित हुआ। तब वह श्रुवावती की परीक्षा लेने के लिए ऋषि वशिष्ठ का रुप धारण कर श्रुवावती के तपस्या स्थल पर उपस्थित हुए। श्रुवावती अपने ध्यानासन से उठकर मायावी इन्द्र को चरणार्घ्य निवेदन करके अपनी क्षमतानुसार सेवा की। तत्‌पश्चात्‌ बताया कि वह उसके अतिथि हैं, इसलिए श्रुवावती अपनी शक्ति के अनुसार जो कुछ उसके पास है वह ऋषि को दान कर देंगी, सिर्फ उनकी स्त्री ना हो सकेंगी, कारण वह इन्द्र को पतिरूप में कामना करती हैं। तब उस मायावेशधारी इन्द्र ने श्रुवावती की निष्ठा और पातिव्रत्य को देखकर संतुष्ट हुए , परन्तु श्रुवावती के निकट अपने स्वरूप को प्रकट नहीं किया। उन्होंने कहा कि उसे वृहत्‌ वस्तु को पाने के लिए वृहत्‌ तपस्या और उच्च साधन का प्रयोजन है। तथापि वह तपस्यारत रहे। मायावी वेषधारी इन्द्र ने श्रुवावती के हाथ में पाँच बदरीफल(बेर) देकर कहा कि इन पाँचो फलों को श्रुवावती शीघ्र ही पका ले। जब यह पाँचो फल पक जाऐंगे, तब श्रुवावती की वासनापूर्ण होगी एवं इन्द्र का दर्शन भी पाऐंगी, इसके साथ-साथ स्वर्ग के सब दिव्य स्थान जो वर्तमान हैं वह सभी तपस्या द्वारा ही लाभ कर सकेगी। क्योंकि तपस्या का फल महासुख होता है। यह सब बताकर छद्मवेशी देवराज इन्द्र निकटस्थ एक तीर्थ में जाकर जप करने लगे जिससे वह बेर के पकने में विघ्न डाल सके। श्रुवावती नवीन उद्यम के साथ लकड़ी प्रज्वलित कर एक पात्र में उन पाँचों फलों को पकाना शुरू किया। इधर इन्द्र भी अपनी शक्ति से उन बेरों को पकने से अयोग्य करने में लगे। उधर सर्व दिवस उपरांत भी श्रुवावती के बदरीफल नहीं पके। उन फलों को पकाने के प्रयास में उसके अनेक दिन व्यतीत हो गए। दिवस-रात्रि अग्नि के ताप से उन फलों को पकाने की अनेक प्रचेष्टा व्यर्थ हुई, फलों को वह किसी भी प्रकार नरम करने में सक्षम नहीं हुई एवं पकाने के लिये प्रयोजनीय सकल वस्तु अर्थात्‌ संग्रहित लकड़ियाँ भी शेष हो गई, यह देखकर कोई अन्य उपाय न देख दृढ़चित्त तपस्विनी श्रुवावती ने अपने चरण-द्वय को उस अग्नि में डाल दिये। धीरे-धीरे दोनों चरण भस्मिभूत होने लगे और श्रुवावती भी दृढ़चित्त से अपने पैरों को अग्नि में प्रवेश कराने लगी। उसके समग्र चरण युगल अग्नि में दग्ध होने पर भी श्रुवावती के मुखमंडल पर कोई विकृति नहीं थी। वह निश्चल चित्त से एकाग्र होकर हृदय से अपने इष्ट के ध्यानमग्ना थी। कारण, उन्हें वशिष्ठ प्रदत्त बदरीफल को पूरी तरह पकाना था, अपने अभीष्ट सिद्धि के लिये। श्रुवावती की इस प्रचंड तपस्या का दर्शन कर इन्द्र ने उसकी ब्राह्मीस्थिति से भी उच्च अवस्था को देखकर मुग्ध व संतुष्ट हुए और तत्क्षण श्रुवावती के सम्मूख निज स्वरूप को प्रकाशित करते हुए श्रुवावती को वरदान दिया कि वह उसकी तपस्या से संतुष्ट हुये हैं और वह (श्रुवावती) अपने देहत्याग उपरांत इन्द्र के साथ मिल जाऐंगी। अर्थात्‌, श्रुवावती की अभिलाषा पूर्ण होगी, एवं देहांतर में वह देवराज के संग स्वर्ग में वास करेंगी। सिर्फ यह ही नहीं, इन्द्र ने यह भी वर दिया था की उनकी तपस्थली 'बदरपाचन' तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध होगी एवं यह एक अनन्य श्रेष्ठ तपस्थली से चिन्हित होगी। इस तीर्थ में स्नान करने से एवं एक रात्रि वास करने

पर स्वर्गलोग के वास का फल प्राप्त होगा। यहाँ 'बदरपाचन' तीर्थस्थल पर महासती अरून्धती ने श्रुवावती के पूर्व सिद्धिलाभ की थी।

आज भी प्राचीन भारतवर्ष के आर्य ऋषि मुनियों एवं कुछेक क्षेत्रों में ऋषि-मुनि कन्याओं की उग्र तपस्या से सिद्ध क्षेत्र के रूप में अनेक तीर्थ व तपस्थल विद्यमान हैं। साधारण मनुष्य इन सभी स्थानों को पवित्र भूमि प्रारूप विश्वास करते हैं, 'बदरपाचन' तीर्थक्षेत्र इनके मध्य अनन्य है। यहाँ पर सिर्फ एक मठ या मंदिर विद्यमान है, जिसमे श्रुवावती की मरमर मूर्ति प्रतिष्ठित है। मूर्ति के सम्मुख एक पत्थर का कुण्ड है जो भस्म से ढका हुआ है, इस मठ में गेरूआ वस्त्रधारी सन्यासी ही रहते हैं, यह वेदपंथी हैं लेकिन शंकराचार्य नामांकित दशनामी सम्प्रदाय के नहीं। इस मठ के कार्य अध्यक्ष 'श्रुवानन्द' नाम से अभिषिक्त होते हैं। हजारों वर्ष पूर्व में श्रुवावती द्वारा आरंभ कठोर तपस्या की धारा आज भी चल रही है। कठोर तपस्या द्वारा श्रुवावती पंथी सन्यासी सिद्धि को प्राप्त करते हैं, इनके मध्य अनेक की उम्र शताधिक है। इससे भी अधिक विस्मयादि विषय यह है कि हजारों वर्ष पूर्व तक श्रुवावती के स्वहस्त प्रज्वलित वह कुण्ड आज भी ज्वलंत है एवं बिना काष्ठ के भी उसमे अग्नि है। कहावत है की, एकबार त्रिदिवस व्यापी अविरत वर्षा और तूफान से नर्मदा तटस्थ इस 'बदरपाचन' तीर्थ का मठ सम्पूर्णत: नष्ट हो गया इस घोर वर्षा के थमने पर देखा गया कि इस कुण्ड की धुनि नहीं बुझी। प्रात: एवं संध्या में सन्यासी कुण्ड के सम्मुख दण्डायमान होते है, कोई धूप, धूनि, या प्रदीप नहीं होता पर वह कुण्ड के सम्मख ऊर्ध्वबाहु अवस्था में दण्डायमान होकर निम्नलिखीत पाठ करते हैं–

'ॐ अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्
अस्य यज्ञस्य सुक्रतूम॥'

(ऋग्वेद १/१२/१)-इत्यादि।

यह स्तव दीर्घ, गम्भीर और माधुर्यमय होता है। धीरे-धीरे कुण्ड की अग्नि ऊद्वीप्त होकर जल उठती है! अद्‌भुत सुगंध मंदिर प्रांगण में भर जाती हैं।

विचित्र है इन ऋषियों द्वारा सेवित भारतवर्ष, जिसके प्रत्येक कण-कण में तपस्थली है। वर्तमान अवक्षयित मानव समाज इसका भेद नहीं जानता, उन्नततर समाज में सृष्टि का बीज समाहित है ऐसे जीवन के धारा मध्य। जिस प्रकार श्रुवावती के अग्नि कुण्ड को अग्नि को भस्म निर्वापित व आवृत नहीं कर सका, उसी तरह वर्तमान अवक्षयित समाज भी केवल भस्म के कुण्ड में परिणत न होकर अग्निमय व तेजोमय हो उठे। आध्यात्मिक चेतना सम्पन्न दृढ़ मानसिकता प्राप्त समाज सुप्राचीन भारत का ऐतिह्य है। काश! उस ऐतिह्य को हम फिर से ला सके।

–मातृचरणाश्रिता श्रीमती अदिति मुखर्ज्जी।
–अनुवाद : मातृचरणाश्रित श्री मोहित शुक्ल।

उद्धार-प्रयासी आत्मा

एकदिन पूनम की रात में प्रभु बन्धुहरि अपने भक्त रमेशचन्द्र को साथ में लेकर ढाका के रमणा-मैदान में भ्रमण करने गए। वृक्षलता शून्य उन्मुक्त मैदान के मध्य दोनों चन्द्रमा की स्निग्ध आलोक में स्नात घुमते-फिरते रहे। अचानक वे देखते है कि मैदान के मध्य स्थल पर घना जमा हुआ कुछ अंधकार सा स्तम्भ की तरह खड़ा है! इसप्रकार जमा हुआ अन्धकार क्या है? यह नहीं समझ पाकर रमेशचन्द्र चिन्तित हुए। साथ में प्रभु न होते तो वे जरुर भयभीत हो जाते। रमेशचन्द्र के मन को समझकर प्रभु ने उनसे कहा–"रमेश, वह अन्धकार क्या है जानते हो? वह आत्मा की समष्टि है। उद्धार-प्रयासी होकर घुम रहे हैं। देखोगे कि थोड़ी देर बाद ही सबका उद्धार हो जाएगा।" यह बात कहकर करुणामय प्रभु ने सकरुण नयनों से उस अंधकार की ओर दृष्टिपात किया क्रमश: धीरे-धीरे देखा गया कि सब अंधकार विलीन हो गया।

भगवान एवं महात्माओं के सकरुण दृष्टिपात से ही एक मुहूर्त में अतृप्त-आत्माओं का उद्धार हो सकता है।

–मातृचरणाश्रिता श्रीमती ज्योति पारेख।